…प्रमाणीकरण १९८४-१९..५

# पद्यपारिजात

## प्रथम भाग

हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद

पद्यपारिजात में हिन्दी के प्रमुख कवियों की रचनाएँ दी गई हैं। विद्यार्थियों की योग्यता को ध्यान में रखा गया है और इस बात की चेष्टा की गई है कि उन्हें प्राचीन काल से ले कर अब तक की सभी प्रवृत्तियों से अवगत करा दिया जाए। इसीलिए इस संकलन में कबीर और रहीम के दोहे सम्मिलित किये गये हैं। इस बात की भी चेष्टा की गई है कि विद्यार्थी हिन्दी की आधुनिक गतिविधियों से भी परिचित रहें। इसीलिए हमने वर्त्तमान कवियों की कुछ ऐसी रचनाएँ ली हैं जो हमारे युग का प्रतिनिधित्व करती हैं।

संकलन के अन्त में हमने उर्दू के तीन कवि—नज़ीर, अकबर और हाली के कुछ पद दिये हैं। हमारा विचार है, आरम्भ में उर्दू हिन्दी की ही एक शैली रही है, जो फ़ारसी लिपि में लिखी जाती थी, किन्तु धीरे-धीरे उससे देशी शब्दों का बहिष्कार होने लगा और फ़ारसी तथा अरबी के शब्दों का प्रयोग बढ़ा।

इस तरह उर्दू हिन्दी से पृथक् होती गई। फिर भी उर्दू में ऐसे कवि हैं जिनकी रचनाओं को हम हिन्दी में ज्यों का त्यों अपना सकते हैं।

जिन उर्दू कवियों की रचनाएँ हमने इस संकलन में दी हैं, उन पर हिन्दी को गर्व हो सकता है। हमारी यह इच्छा है कि इन तीनों कवियों की रचनाएँ नागरी लिपि में प्रकाशित हों और उन जैसे सभी कवियों को हिन्दी साहित्य के इतिहास में स्थान मिले। हमारे विद्यार्थी इन तीनों कवियों की रचनाओं से हिन्दी की एक उपेक्षित शैली से भी परिचित होंगे।

**प्रकाशक**

## अनुक्रमणिका



---

# साखी

कबीर सतगुरु नाँ मिल्या रही अधूरी सीख
स्वाँग जती का पहरि करि घरि घरि माँगे भीख १

पाँसा पकड्या प्रेम का सारी किया सरीर
सतगुरू दाँव बताइया खेलै दास कबीर २

मेरा मन सुमिरै राम कूँ मेरा मन रामहिं आहि
अब मन रामहिं ह्वै रह्या सीस नवावै काहि ३

कबीर निरभै राम जपि जब लग दीवै बाति
तेल घट्या बाती बुझी सोवेगा दिन राति ४

माखी गुड़ में गड़ि रही पंख रही लपटाइ
ताली पीटै सिर धुनैं, मीठै माँहि समाइ ५

कबिरा सोई दिन भला जा दिन संत मिलाहिं
अंक भरे भरि भेंटिया, पाप सरीरौं जाहिं ६

ऐसी बाणी बोलिये मन का आपा खोइ
अपना तन सीतल करै औरन कौं सुख होइ ७

कबीर यह घर प्रेम का खाला का घर नाहिं
सीस उतारै हाथि करि, सो पैसे घर माहिं ८

कबीर हरि सबकूँ भजै, हरिकूँ भज न कोइ
जब लग आस शरीर की तब लग दास न होइ ९

झूठे सुख कौं सुख कहै मानत हैं मन मोद
खलक चबीणाँ काल का, कुछ मुख में कुछ गोद  १०

जे सुन्दरि साँई भजै तजै आन की आस
ताहि न कबहूँ परहरे, पलक न छाँड़ै पास  ११

जब गुण कूँ गाहक मिलै तब गुण लाख बिकाइ
जब गुण कौं गाहक नहीं तब कौड़ी बदले जाइ  १२

विष के बन में घर किया सरप रहे लपटाइ
ताथैं जियरै डर गह्या जगत रैणि बिहाइ  १३

## दोहे

को रहीम पर द्वार पर जात न जिय पछितात
संपति के सब जात हैं, विपति सबै लै जात १

जो रहीम मन हाथ है, मनसा कहुँ कि न जाहिं
जल में ज्यों छाया परे काया भीजति नाहिं २

प्रीतम छवि नैनन बसी, पर छवि कहाँ समाय
भरी सराय रहीम लखि आप पथिक फिर जाय ३

रहीम मनहिं लगाय के देखि लेहु कि न कोय
नर को बस करिबो कहा नारायण बस होय ४

रहिमन लाख भली करौ, अगुनी अगुन न जाय
राग सुनत पय पियत हू, साँप सहज धरि खाय ५

अब रहीम मुसकिल परी, गाढ़े दोऊ काम
साँचे से तो जग नहीं, झूठे मिलै न राम ६

रहिमन चुप ह्वै बैठिये देखि दिनन को फेर
जब नीके दिन आइहैं बनत न लगिहै बेर ७

रहिमन पानी राखिये बिन पानी सब सून
पानी गये न ऊबरे, मोती, मानुस, चून ८

रहिमन नीचन संग बसि लगत कलंक न काहि
दूध कलारिन हाथ लखि मद समुझहिं सब ताहि ९

शशि की शीतल चाँदनी, सुन्दर सबहिं सुहाय
लगे चोर चित में जटी, घटि रहीम मन आय १०

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुअङ्ग ११

यों रहीम सुख होत है, बढ़त देखि निज गोत
ज्यों बड़री अँखियाँ निरखि, आँखिन कों सुख होत १२

सर सूखे पंछी उड़े औरे सरन समाहिं
दीन मीन बिन पच्छ के, कहु रहीम कहँ जाहिं १३

तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियहिं न पान
कहि रहीम पर-काज हित, सम्पति सँचहिं सुजान १४

## मङ्गल यात्रा

अवधपुरी आज सज्जिता है।
बनी हुई दिव्य-सुन्दरी है॥
विहँस रही है विकास पा कर।
अटा अटा में छटा भरी है॥

दमक रहा है नगर, नागरिक—
प्रवाह में मोद के बहे हैं॥
गली गली है गई सँवारी।
चमक रहे चारु चौरहे हैं॥

प्रदीप जो थे लसे कलस पर।
मिली उन्हें भूरि दिव्यता थी।
पसार कर रवि उन्हें परसता।
उन्हें चूमती दिवा-विभा थी॥

खड़ा हुआ सामने सुरथ था।
सजा हुआ देवयान जैसा।
उसे सती ने विलोक सोचा।
प्रयाण में अब विलम्ब कैसा?

उचित जगह पर विदेहजा को।
विराजती जब विलोक पाया॥
सवार सौमित्र भी हुए तब।
सुमित्र ने यान को चलाया॥

(वैदेही वनवास)

# मनोभाव

कलेजा मेरा जलता है, याद में किसकी रोता हूँ।
अनूठे मोती के दाने किस लिए आज पिरोता हूँ॥
फूल कितने मैंने तोड़े, बनाता हूँ बैठा गजरा
चल रहा है धीरे धीरे, प्यार दरिया में दिल बजरा॥

सामने हुए रंगरलियाँ, रंगतें क्यों दिखलाता हूँ
देख करके खिलती कलियाँ, किस लिए खिल जाता हूँ ?
चित्त हरने वाले छवि में पेड़ की हरियाली है सनी
बलाएँ किसकी लेने को, बेलियाँ अलबेली हैं बनी ?

उमङ्गें झलकी पड़ती हैं दिन बहुत लगता है प्यारा
देखता हूँ किसका पथ ! क्यों जगमगा आँखों का तारा ?
देखता हूँ मैं क्यों सपना ? भाग मेरा ऐसा है कहाँ
सदा ऊसर-ऊसर ही रहा, मिली कब केसर क्यारी वहाँ ?

कलेजा मेरा पत्थर है, आँख का आँसू है पानी
हवा बन जाती है आहें, पीर क्यों जाये पहचानी ?

## उन्माद

जब नहीं आ कर किया तुमने हृदय में वास
हो अधीर स्वयं चला तब वह तुम्हारे पास
पर न तुम को पा सका, की यद्पि बहुत तलाश
लौट आया अन्त में हो कर अतीव हताश

दृष्टिगोचर हो न तुम कहते सभी मतिमान
सत्य हम भी क्यों न फिर यह बात लेते मान
लोचनों को मूँद कर करने लगे हम ध्यान
हाय तो भी कुछ हमें न हुआ तुम्हारा ज्ञान

चित्त दे कर और सुन लो एक दिन की बात
सो रहे थे हम पड़े, बीती बहुत थी रात
सामने तुम हो खड़े, ऐसा हुआ कुछ ज्ञात
किन्तु जब आँखें खुलीं तब हुआ वज्र-निपात

खिलखिला कर हम कभी हँसते बहुत साह्लाद
और रोते हैं कभी पा कर अतीव विषाद
प्रेम-वश करते तुम्हारा हम सदा गुणवाद
लोग क्यों कहते भला हमको हुआ उन्माद ?

हो निराश हृदय हुआ है अब अतीव अधीर
किन्तु सूखा जा रहा है क्यों सदैव शरीर
लोचनों को क्या व्यथा है जो बहाते नीर !
क्या इन्हें भी लग गया है प्रेम का वह तीर !

सोच लो कब से बने हैं हम तुम्हारे दास
क्यों हमें फिर कर रहे तुम बार बार निराश ?
बस तुम्हीं कह दो जहाँ पर है तुम्हारा वास,
है पहुँचता प्रेम का भी क्या वहाँ न प्रकाश ?

कर रहे कब से तुम्हारे हम गुणों का गान ?
पर तुम्हें भी क्या कभी आया हमारा ध्यान ?
दो बता हमको तुम्हारा है जहाँ संस्थान
किस तरह होता वहाँ है प्रेम की पहचान ?

कुछ समझते हों शास्त्रज्ञ ज्ञान- निधान
पर नहीं उनको तनिक भी है तुम्हारा भान
देख कर यह बन गये हम अज्ञ मूढ़ महान्
हाय, तो भी चित्त में न हुआ तुम्हारा भान

यदपि अब तक है हुई तुमसे नहीं पहचान
किन्तु तुम सहृदय सरल हो है यही अनुमान
अब अधिक जाता सहा न वियोग दुःख महान्
दे हमें दर्शन करो अब तो कृतार्थ सुजान !

# कुटिया में राजभवन

मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया
सम्राट् स्वयं प्राणेश, सचिव देवर हैं,
देते आ कर अशीष हमें मुनिवर हैं।
धन तुच्छ यहाँ, यद्यपि असंख्य आकर हैं,
पानी पीते मृग-सिंह एक तट पर हैं।

सीता रानी को यहाँ लाभ ही लाया
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया
औरों के हाथों यहाँ नहीं पलती हूँ,
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ!
श्रमवारि-बिन्दु फल स्वास्थ्य-शुक्ति फलती हूँ
अपने अञ्चल से व्यजन आप झलती हूँ।

तनु-लता-सफलता-स्वादु आज ही आया
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया।
किसलय कर स्वागत हेतु हिला करते हैं
मृदु मनोभाव सम सुमन खिला करते हैं
डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं
तृण तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं।

निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया
कहता है कौन कि भाग्य ठगा है मेरा?
वह सुना हुआ भय दूर भगा है मेरा।

कुछ करने में अब हाथ लगा है मेरा,
वन में ही तो गार्हस्थ्य जगा है मेरा।

वह वधू जानकी बनी आज यह जाया
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया
फल-फूलों से हैं लदी डालियाँ मेरी,
वे हरी पत्तलें, भरी थालियाँ मेरी,
मुनि बालाएँ हैं यहाँ आलियाँ मेरी.
तटिनी की लहरें और तालियाँ मेरी।

क्रीड़ा-सामग्री बनी स्वयं निज छाया
मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया

## भारत देश

फिर उसने विस्तृत स्वदेश की ओर दृष्टि निज फेरी
कहा अहा ! कैसी सुन्दर है जन्म-भूमि यह मेरी
भक्ति, प्रेम, श्रद्धा से उसका तन पुलकित हो आया
रोम-रोम में सेवा-व्रत का परमानन्द समाया

छूता हुआ गाँव की सीमा अति निर्मल जलवाला
बहता है अविराम निरन्तर कलकल स्वर से नाला
अनति दूर पर हरियाली से लदी खड़ी गिरि-माला
किन्तु नहीं इससे हृदयों में है आनन्द उजाला

कदली-वन से हरी धरा को देख न आँख अघाती
क्यों यह नहीं गाँव वालों के जी की जलन मिटाती
गेहूँ, चने, मटर, जौ के हैं खेत खड़े लहराते
क्या कारण है, जो ये मन का कुछ न विषाद मिटाते

कोकिल का आलाप पपीहे की विरहाकुल बानी
तोता-मैना का विवाद, बुलबुल की प्रेम-कहानी
मधुर प्रेम के गीत तरुनियाँ गातीं, खेत निरातीं
क्या ये नहीं किसी के मन का क्षण भर को कष्ट भुलातीं ?

सुन्दर सर हैं, लहर मनोरथ-सी उठ कर मिट जाती
तट पर है कदम्ब की विस्तृत छाया सुखद सुहाती
लटक रहे हैं धवल सुगन्धित कन्दुक से फल फूले
गूँज रहे हैं अलि पी कर मकरन्द मोद में भूले

नालों का संयोग, साँझ का समय, घना जंगल है
ऊँचे-नीचे खोह कगारे निर्जन बीहड़ थल है
रह-रह कर सौरभ समीर में हैं वन-पुष्प उड़ाते
ताप तप्त जन क्यों न यहाँ आ क्षण भर एक जुड़ाते

## सहज

सहज-सहज पग धर आओ उतर;
देखें वे सभी तुम्हें पथ पर।

वह जो सिर बोझ लिये आ रहा,
वह जो बछड़े को नहला रहा,

वह जो इस-उससे बतला रहा,
देखूँ, वे तुम्हें देख जाते भी हैं ठहर ?

उनके दिल की धड़कन से मिली
होगी तस्वीर जो कहीं खिली,

देखूँ मैं भी, वह कुछ भी हिली
तुम्हें देखने पर, भीतर भीतर ?

## ध्वनि

अभी न होगा मेरा अन्त।
अभी अभी ही तो आया है
मेरे वन में मृदुल वसन्त—
अभी न होगा मेरा अन्त।

हरे हरे ये पात,
डालियाँ, कलियाँ कोमल गात।
मेरे जीवन का यह है जब प्रथम चरण,

इसमें कहाँ मृत्यु
है जीवन ही जीवन।

अभी पड़ा है आगे सारा यौवन;
किरण-कल्लोलों पर बढ़ता रे यह बालक मन;

मेरे ही अविकसित राग से
विकसित होगा बन्धु दिगन्त—
अभी न होगा मेरा अन्त।

बार बार आती है मुझको
मधुर याद बचपन तेरी
गया, ले गया तू जीवन की
सब से मस्त खुशी मेरी

चिन्ता रहित खेलना, खाना
वह फिरना निर्भय स्वच्छन्द
कैसे भूला जा सकता है
बचपन का अतुलित आनन्द ॥

ऊँच-नीच का ज्ञान नहीं था
छुआ-छूत किसने जानी
बनी हुई थी अहा ! झोंपड़ी
और- चीथड़ों में रानी !

किये दूध के कुल्ले मैंने
चूस अंगूठा सुधा पिया
किलकारी कल्लोल मचा कर
सूना घर आबाद किया

रोना और मचल जाना भी
क्या आनन्द दिखाते थे।
बड़े बड़े मोती से आँसू
जयमाला पहनाते थे।

मैं रोयी, माँ काम छोड़ कर
आयी मुझको उठा लिया
झाड़ पोंछ कर चूम-चूम—
गीले गालों को सुखा दिया

दादा ने चन्दा दिखलाया,
नेत्र नीर द्रुत चमक उठे।
धुली हुई मुस्कान देख कर
सब के चेहरे चमक उठे।

आजा बचपन! एक बार फिर,
दे दे अपनी निर्मल शान्ति;
व्याकुल व्यथा मिटानेवाली—
वह अपनी प्राकृत विश्रान्ति।

मैं बचपन को बुला रही थी,
बोल उठी बिटिया मेरी।
नन्दन-वन-सी फूल उठी—
वह छोटी-सी कुटिया मेरी

'माँ,ओ' कह कर बुला रही थी
मिट्टी खा कर आयी थी।
कुछ मुँह में कुछ लिये हाथ में-
मुझे खिलाने आयी थी।

पुलक रहे थे अंग, दृगों में
कौतूहल था झलक रहा।
मुँह पर थी आल्हाद लालिमा;
विजय गर्व था झलक रहा।

मैंने पूछा; 'यह क्या लायीं?'
बोल उठी वह—'माँ, काओ,'
हुआ प्रफुल्लित हृदय खुशी से,
मैंने कहा, 'तुम्हीं खाओ।'

## वञ्चित

चढ़ कर टूही पर, खड्डों में उतर के
वक्र पथ सौ-सौ पार करके
घूम-फिर हिंस्र जन्तुओं से भरी झाड़ियाँ
छान डालीं दुर्गम पहाड़ियाँ

किन्तु जिसकी थी चाह,
पारस मिला न आह!
अन्ध कारागार में से छूट कर,
ऊपर से टूट कर,
हर-हर-नादिनी

दौड़ती हुई-सी जहाँ बहती थी ह्लादिनी;
पत्थरों के साथ टकराती हुई,
विजन-वनों में बल खाती हुई,
अपने किनारे आप ही थपेड़
भू पर गिराती हुई—
ऊँचे पेड़

दूर तक घूम घूम, खोज खोज मैं थका
पारस वहाँ भी हा! न पा सका
क्षुब्ध रुद्र

जान पड़ता था जहाँ भीषण महासमुद्र;
अन्तहीन यात्रा में भटक के,

लहरें भुजङ्गिनी-सी उठ फुफ्कार कर,
पार पर

क्रोध-भरी, फन-सा पटक के
अस्त करती थी जहाँ,

रात-दिन खोजता हुआ ही वहाँ
घूमता फिरा मैं भूल भूख-प्यास,

छिन्न पद, छिन्न वास
किन्तु वह रत्नाकर

अन्त में प्रतीत हुआ शंख-शुक्तियों का घर!
प्यासा ही रहा मैं वहाँ,
जान भी सका न वह पारस मिलेगा कहाँ,

करके प्रयत्न सभी हार के,
अन्त में मैं लौटा, झख मार के।
इतने दिनों की तपश्चर्या कड़ी
जीवन की साधना कठोर यह ऐसी बड़ी
निष्फल हुई यों हाय!

बैठ गया मेरा मन भग्न प्राय!
एक दिन अतल तड़ाग के किनारे क्लान्त
बैठा हुआ था मैं श्रान्त,

पत्थरों की सीढ़ी पर सुश्री भरी
स्नान कर बैठी थी अपूर्व एक सुन्दरी।

भीगा हुआ वस्त्र ही थी पहने
धारण किये हुए सुवर्ण-रंग

अंग अंग
उसके बने थे स्वयं गहने

बाँया पैर नीचे लटकाये नील नीर पर
दाँया पैर रक्खे हुए सीढ़ी के प्रतीर पर

अपने नुकीले नेत्र नीचे किये,
पत्थर की बट्टी हाथ में लिये

पड़ी मलती थी वह बार-बार पानी डाल !
एकाएक हो गया विचित्रतर मेरा हाल !
काँप उठा सारा तन सहसा उसे निहार,

बार बार,
देखी वह बट्टी जब दृष्टि फेंक
संशय रहा न नेक-
यत्न सब कर-कर

खोजता फिरा जिसे मैं जन्म भर
पारस वही है, यह है वही।
मेरी तप साधना का श्रेष्ठ फल है यही

छोड़ निज ग्राम-गेह,
तप में तपा के देह,
रात-दिन तेरा ही ध्यान किये,
हे सुरत्न, तेरे लिए

घूमा-फिरा दूर-दूर कितना कहाँ कहाँ

तू तो अरे, था समीप ही यहाँ !
रत्न यह अतुल महा महान्
हस्तगत कैसे कर पाऊँ मैं ?

लक्ष्मि, क्या उठेगी न तू सांग स्नान कर,
कब तक बैठी ही रहेगी इसी स्थान पर ?
पैर मलती तू और मैं हूँ हाथ मलता,
पल-पल का भी है विलम्ब मुझे खलता !
छोड़, अरी छोड़, इसे छाती से लगाऊँ मैं !

एकाएक करके समाप्त काम
अविराम

फेंक दिया उसने सुरत्न बीच जल में !
क्षण भर मौन रह,
नारी हँसी उच्च अट्टहास से,
और भी प्रदीप्त दन्त-पंक्ति के प्रकाश से
बोली वह–

"दोष किसे देता है अरे अपात्र ?
तेरे लिए था वह लोष्ठ मात्र।
तू ही जान बूझ के छला गया,
तेरे हाथ से ही यह रत्न है चला गया !"

# उखड़ा हुआ वृक्ष

भला किया, जो इस उपवन के, सारे पुष्प तोड़ डाले,
भला किया मीठे फलवाले, ये तरुवर मरोड़ डाले,
भला किया, सींचो-पनपाओ, लगा चुके हो जो कलमें,
भला किया दुनिया पलटा दी, प्रबल उमङ्गों के बल में।
लो, हम तो चल दिये, नये पौधो प्यारो! आराम करो।
दो दिन की दुनिया में आये, हिलो मिलो कुछ काम करो।
पथरीले ऊँचे टीले हैं, रोज नहीं सींचे जाते,
वे नागर न यहाँ आते हैं, जो नित्य बग़ीचे आते।
झुकी टहनियाँ तोड़ ताड़ कर, वनचर भी खा जाते हैं,
शाखा-मृग कन्धों पर चढ़ कर, भीषण शोर मचाते हैं।
दीन-बन्धु की कृपा बन्धु, जीवित हैं, हाँ, हरियाले हैं,
भूले-भटके कभी गुजरना, हम वे ही 'फल वाले हैं।

## गीत

कहता जग दुख को प्यार न कर !
अनबींधे मोती यह दृग के,
बँध पाये बन्धन में किसके ?

पल पल बनते पल पल मिटते,
तू निष्फल गुथ गुथ हार न कर !
कहता जग दुख को प्यार न कर ?

यह मधुर कसक तेरे उर की,
कञ्चन की और न हीरक की;

मेरी स्मित से इसका विनिमय—
कर ले या चल व्यापार न कर,
कहता जग दुख को प्यार न कर ?

सुख मधु में क्या दुख का मिश्रण !
दुख विष में क्या सुख-मिश्री कण !

जाना कलियों के देश तुझे
तू शूलों से शृङ्गार न कर
कहता जग दुख को प्यार न कर ?

# धरोहर

अभी भूख से रोते रोते लाल हमारा सोया है,
धूल-भरे हीरे ने मेरे घर-भर मोती बोया है;
गरम गरम आँसू गालों से नहीं अभी तक सूखे हैं,
क्या दूँ बच्चे को हे ईश्वर, दो दिन से हम भूखे हैं।
परिक्रमा कर ध्रुवतारा की, 'सप्तऋषि' नीचे आये,
नभ से उडुगण उड़, फूलों पर ओस बिन्दु बन बन छाये;
शुक्र उगा, अब चल खेतों से, ले आऊँ बथुए का साग,
सूखी लकड़ी भी बटोर कर सुलगा लूँ चूल्हे में आग।
नमक नहीं है, नहीं सही दे साग अलोना ही भगवान्,
क्षुधा मिटा प्यारे बच्चे की, अपनी भी रख लूँगी जान;
मेरा नहीं जगत् में कोई, हिन्दू-रमणी हूँ पतिहीन,
रक्खूँगी मर्यादा अपनी यद्यपि हूँ अनाथ अति दीन।
होती सती संग में उनके, शव यदि उनका पा जाती,
अपने जीवन की पुष्पाञ्जलि उन पर भेंट चढ़ा आती;
मिले नहीं अन्तिम दर्शन हा! हुआ विधाता तू प्रतिकूल
जहाँ खेत में काम आ गये, है विदेश वह सागर-पार
नहीं वहाँ अपना है कोई, नहीं वहाँ गङ्गा की धार;
अन्तिम संस्कार तो कैसा, उनकी मिट्टी पर केवल;
मृगदल आ आ चित्र खचित हो बरसावेंगे लोचन-जल।
आ कर शरद काँपते कर से चादर धवल चढ़ावेगा,
ऋतुनायक शत-शत फूलों से पावन भूमि सजावेगा;
ग्रीष्म शोक से पीला हो कर हा! हा! हा! ले कर निःश्वास,

पत्ते गिरा गिरा आँसू से विकल फिरेगा बना उदास।
जीवन के आधार हमारे मुख क्यों अपना छिपा लिया,
घर कर लिया दुखों ने घर में, सुख का घर कर दिया दिया;
तेरे शीघ्र मिलन से प्यारे वञ्चित करता है यह लाल,
तेरी यही धरोहर रक्खे काट रही हूँ जीवन-काल।
सोते में क्या देख रहा है रह रह जो मुसकाता है,
हैं! हैं! चौंक उठा क्यों डर कर, कौन दुष्ट डरवाता है?
चुप चुप मुन्ना! राजदुलारे! देखो बलि बलि जाती हूँ,
नजर लगी तो नहीं किसी की, राई-नोन जलाती हूँ।
तू डर जावे! वीर पुत्र हो! वीर पिता का लघुतम चित्र
जिसने रण में अरिमर्दन कर. किया वीरगति-लाभ पवित्र;
उसी आर्य का वीर सुअन तू! स्वप्न देख डर जावे यों
जीव अमर है, कायर बन कर कोई प्राण बचावे क्यों?
रो मत मुन्ना! पलने पर आ, तुझे झुला दूँ यों झूला,
यह गुलाब-सा गाल चूम लूँ, बेटा हम से क्यों फूला;
आ रे, आ जा! बारे आ जा! नदी किनारे तू आजा!
चन्दा मामा दूध पिला जा, मेरा बेटा है राजा!

वन-श्री

## कलरव

बाँसों का झुरमुट
सन्ध्या का झुटपुट
हैं चहक रही चिड़ियाँ
टी-वी-टी-टुट्-टुट् ।

वे ढाल ढाल कर उर अपने
हैं बरसा रहीं मधुर सपने
श्रम-जर्जर विधुर चराचर पर
गा गीत स्नेह-वेदना सने !

ये नाप रहे निज घर का मग
कुछ श्रमजीवी धर डगमग डग,
भारी है जीवन ! भारी पग ! !
आः, गा-गा शत-शत सहृदय खग
सन्ध्या बिखरा निज स्वर्ग सुभग
औ, गन्ध-पवन झल मन्द व्यजन
भर रहे नया इनमें जीवन,
ढीली है जिनकी रग-रग !

—यह लौकिक औ' प्राकृतिक कला,
यह काव्य अलौकिक सदा चला
आ रहा सृष्टि के साथ पला !

× × ×

गा सके खगों-सा मेरा कवि
विश्री जग की सन्ध्या की छवि !
गा सके खगों-सा मेरा कवि
फिर हो प्रभात, फिर आवे रवि !

---

## चींटी

चींटी को देखो ?
वह सरल, विरल, काली रेखा
तम के तागे-सी जो हिल डुल
चलती लघु पद पल पल मिल जुल
वह है पिपीलिका पाँति !
देखो ना, किस भाँति
काम करती वह संतत ?
कन-कनके चुनती अविरत।
गाय चराती
धूप खिलाती
बच्चों की निगरानी करती,
लड़ती, अरि से तनिक न डरती !
दल के दल, सेना सँवारती,
घर आँगन, जन-पथ बुहारती
देखो वह वाल्मीकि सुघर,
उसके भीतर है दुर्ग. नगर !
अद्भुत उसकी निर्माण कला,
कोई शिल्पी क्या कहे भला !

उसमें हैं सौध, धाम, जनपथ,
आँगन, गो-गृह, भण्डार अकथ
हैं डिम्भ सद्म, वह शिविर रचित,
ड्योढ़ी बहु, राजमार्ग विस्तृत।
चींटी है प्राणी सामाजिक,
वह श्रमजीवी, वह सुनागरिक!
देखो चींटी को
उसके जी को
भूरे बालों की-सी कतरन,
छिपा नहीं उसका छोटापन,
वह समस्त पृथ्वी पर निर्भय
विचरण करती श्रम में तन्मय
वह जीवन की चिनगी अक्षय!
वह भी क्या देही है, तिल-सी?
प्राणों की रिलमिल, झिलमिल-सी?
दिन भर में वह मीलों चलती,
अथक, कार्य से कभी न टलती,
वह भी क्या शरीर से रहती?
वह कण, अणु, परमाणु?
चिर सक्रिय वह, नहीं स्थाणु!
हा मानव!
देह तुम्हारे ही है, रे शव!
तन की चिन्ता में घुल निशिदिन
देह मात्र रह गये,
प्राणि प्रवर
हो गये निछावर

अचिर धूलि पर ! !

मानव को आदर्श चाहिए,
संस्कृति, आत्मोत्कर्ष चाहिए;
बाह्य-विधान उसे हैं बन्धन
यदि न साम्य उनके अन्तर्गत—
मूल्य न उनका चींटी के सम !
वे हैं जड़, चींटी है चेतन !
जीवित चींटी, जीवन-वाहक,
मानव जीवन का वर नायक,
वह स्वतन्त्र, वह आत्म-विधायक ;

× ×

पूर्णतन्त्र मानव, वह ईश्वर,
मानव की विधि उसके भीतर

# विप्लव गायन

कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाये,
एक हिलोर इधर से आये एक हिलोर उधर से आये।
प्राणों के लाले पड़ जाएँ, त्राहि त्राहि रव नभ में छाये
नाश और सत्यानाशों का धुँआधार जग में छा जाये,
बरसे आग, जलद जल जायें, भस्मसात् भूधर हो जाए
पाप-पुण्य सदसद्भावों की धूल उड़ उठे दायें बायें,
नभ का वक्षस्थल फट जाये, तारे टूक-टूक हो जायें,
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाये।

आँखों का पानी सूखे, वे शोणित की घूँटें हो जाएँ
एक ओर कायरता काँपे, गतानुगति विगलित हो जाये
अन्धे मूढ़ विचारों की वह अचल शिला विचलित हो जाये
और दूसरी ओर कँपा देनेवाला गर्जन उठ धाये,
अन्तरिक्ष में एक उसी नाशक तर्जन की ध्वनि मँडराये
कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाये

सावधान ! मेरी वीणा में चिनगारियाँ आन बैठी हैं,
टूटी हैं मिज़रावें, युगलांगुलियाँ ये मेरी ऐंठी हैं,
कण्ठ रुका जाता है, महानाश का गीत रुद्ध होता है,
आग लगेगी क्षण में, हृत्तल में अब क्षुब्ध युद्ध होता है;
झाड़ और झखाड़ व्याप्त हैं, इस ज्वलन्त गायन के स्वर से,
रुद्ध गीत की क्षुब्ध तान निकली है मेरे अन्तर तर से !

कण-कण में है व्याप्त वही स्वर रोम-रोम गाता है वह ध्वनि,
वही तान गाती रहती है, कालकूट फणि की चिन्तामणि
जीवन-ज्योति लुप्त है अहा ! सुप्त हैं संरक्षण की घड़ियाँ,
लटक रही हैं प्रतिपल में इस नाशक संभक्षण की लड़ियाँ,
चकनाचूर करो जग को गूँजे ब्रह्माण्ड नाश के स्वर से,
रुद्ध-गीत की क्रुद्ध तान निकली है मेरे अन्तर तर से !

दिल को मसल-मसल मेंहदी रचता आया हूँ, मैं, यह देखो—
एक-एक अँगुल-परिचालन में नाशक ताण्डव को पेखो !
विश्वमूर्ति ! हट जाओ, यह वीभत्स प्रहार सहे न सहेगा।
टुकड़े-टुकड़े हो जाओगे, नाश-मात्र अवशेष रहेगा,
आज देख आया हूँ, जीवन के सब राज समझ आया हूँ,
भ्रू विलास में महानाश के पोषक सूत्र परख आया हूँ,

जीवन-गीत भुला दो, कण्ठ मिला दो, मृत्यु-गीत के स्वर से,
रुद्ध-गीत की क्रुद्ध तान निकली है मेरे अन्तर तर से !!!

---

हम दीवानों की क्या हस्ती ?
हैं आज यहाँ, कल वहाँ चले !
मस्ती का आलम साथ चला,
हम धूल उड़ाते जहाँ चले !

आये बन कर उल्लास अभी,
आँसू बन कर बह चले अभी,

सब कहते ही रह गये अरे !
तुम कैसे आये कहाँ चले ?
किस ओर चले यह मत पूछो,
चलना है बस, इसलिए चले;
जग से उसका कुछ लिये चले,
जग को उसका कुछ दिये चले

दो बात कहीं, दो बात सुनीं !
कुछ हँसे और कुछ रोये,
छक कर सुख-दुःख के घूँटों को
हम एक भाव से दिये चले !

हम भिखमंगों की दुनियाँ में,
स्वच्छन्द लुटा कर प्यार चले,
हम एक निशानी सी उर पर
ले असफलता का भार चले,
हम मान रहित अरमान रहित
जी भर कर खुल कर खेल चुके,

हम हँसते हँसते आज यहाँ,
प्राणों की बाज़ी हार चले।

हम भला बुरा सब भूल चुके,
नत मस्तक हो मुख मोड़ चले
अभिशाप उठा कर होठों पर
वरदान दृगों से छोड़ चले,

अब अपना और पराया क्या?
आबाद रहें रुकने वाले!

हम स्वयं बँधे थे और स्वयं
हम अपने बन्धन तोड़ चले!

---

श्री जगन्नाथप्रसाद 'मिलिन्द'

## पछतावा

मेरे उर का कल्मष होता उस सूने पथ का रजकण,
सारा अहंकार जग का बह जाता जिसमें दृग-जल बन;
मेरे नयनों का प्रकाश उस कुटिया का दीपक होता
जिसमें वैभव निर्धनता के चरण अश्रु बन कर धोता,
मेरे श्रवणों की उत्कंठा होती वह आशा-सन्देश
जिससे बुझता हृदय किसी का फिर पाता नव ज्योति विशेष
मेरे उर का स्नेह सरसता होती उसके जीवन की;
जिस निर्धन का हृदय पार कर जाता 'हाट' प्रलोभन की !
मेरे कर की तत्परता उस नौका की होती पतवार
जिसे नये नाविक का साहस भँवरों से खेता मझधार,
मेरी कर्कशता होती उस रण में तरुणों की हुँकार
जिसमें दलित मनुजता उठती पशुबल का करने प्रतिकार,
मेरा जीवन जग-जीवन के कण में वितरित होता,
मेरा 'सब कुछ' हाय न होता यदि, तो मेरा हित होता !

---

# सैनिक की मृत्यु शय्या पर

इस की उमंग के सब बन्धन
यौवन ने चितवन से खोले,
इसके प्राणों के स्वप्न गये
बिजली के हासों से धोले।

इसने बदली के बालों का
निज यौवन से श्रृंगार किया,
इसने सागर की लहरों से,
अपनी उमंग को प्यार किया।

इसने हिम-गिरि के शिखरों को
चुम्बित निज आशा से जाना,
इसने तारों के गानों को,
अपने गानों से पहचाना।

इसकी आँखों में खेला की
वारुणी लहर भर बेहोशी,
इसकी आँखों में खेला की
रूपसि की चंचल खामोशी,

यह वीर तुम्हारे लिए हृदय के
अरमानों के दीप जला,
माँ, स्वतन्त्रता के हेतु खोल
सब बन्धन हो उन्मुक्त चला।

बह रहे खून के फव्वारे
हँस रहे घाव न्यारे न्यारे,
'यों मरनेवाले जिन्दा हैं'
यों मरता जा-जीता जा रे,

इसके शरीर का रोम रोम नव जीवन नद भर भर लाता

बिजली ने कड़क, गरज घन ने,
बादल ने बरस प्रणाम किया,
तरुओं ने हिल, कलियों ने खिल,
कुसुमों ने मिल सम्मान दिया

बच्चे भी किलक पुकार उठे,
मानों सैनिक के चरणों पर,
गोदी से निकल मचल माँ से-
'जाने दो हमको उस पथ पर।'

सब ओर उठी ध्वनि एक यही
जीवन है यही सफल जीवन,
केवल आँचल से रुक धक् धक्-
पत्नी ने कहा 'कहाँ जीवन?'

मोती की बूँदों से हँस कर
माता कह उठी यही जीवन!
गर्वित उद्दीप्त पिता बोला—
जीवन है यही महाजीवन!

जीवन ने उत्सव देखे हैं
जीवन ने आँसू भी देखे,

पर कौन याद युग नाप सकी
मर कर जिसने जीवन देखे!

हैं आग लगाने वाले तो
पर बुझा सकें ऐसे कोई,
हैं मार मिटानेवाले तो
मिट जिला सकें ऐसे कोई?

इस स्वतन्त्रता की वेदी को विरला ही वीर बना पाता!

निर्माण किया नव युग तुमने,
निर्माण किया नव नव यौवन,
चरणों के चिह्न मिटेंगे क्या
बलिदान गगन के तारक धन?

यह भूमि पवित्र हुई तुम से
आँचल का दूध पवित्र हुआ,
माँ की आशाएँ सफल हुईं
बलिदान प्राण का गीत हुआ।

तुम स्वतन्त्रता के दीवाने,
बलिदान सजा कर लाये थे,
युग की साँसों से चढ़ ऊपर,
सम्मान सजा कर लाये थे!

सचमुच तुमने ही पहचाना,
यौवन का एक मोल जाना,
प्राणों के बदले आज़ादी—
मिट मिट कर आज़ादी पाना,

ये कोटि कोटि पण्डित, ज्ञानी,
तुम पर न्यौछावर हैं सैनिक!
ये कोटि कोटि धन के स्वामी
तुम पर न्यौछावर हैं सैनिक!

---

लहर सागर का नहीं शृंगार, उसकी विकलता है।
अनिल अम्बर का नहीं खिलवार, उसकी विकलता है।
विविध रूपों में हुआ साकार रंगों से सुसज्जित,
मृत्तिका का यह नहीं संसार उसकी विकलता है।

गन्ध कलिका का नहीं उद्‌गार, उसकी विकलता है।
फूल मधुवन का नहीं गलहार, उसकी विकलता है।
कोकिला का कौन-सा व्यवहार ऋतुपति को न भाया?
कूक कोयल की नहीं मनुहार, उसकी विकलता है।

गान गायक का नहीं व्यापार, उसकी विकलता है।
राग वीणा की नहीं झंकार, उसकी विकलता है।
भावनाओं का मधुर आधार साँसों से विनिर्मित,
गीत कवि उर का नहीं उपहार, उसकी विकलता है!

---

# युद्ध

युद्ध का उन्माद संक्रमशील है,
एक चिनगारी कहीं जागी अगर,
तुरत बह उठते पवन उनचास हैं,
दौड़ती, हँसती, उबलती आग चारों ओर से।

और तब रहता कहाँ अवकाश है
तत्व चिन्तन का, गंभीर विचार का?
आग की लपटें चुनौती भेजतीं
प्राणमय नर में छिपे शार्दूल को।

युद्ध की ललकार सुन प्रतिशोध से
दीप्त हो अभिमान उठता बोल है,
चाहता नस तोड़ कर बहना लहू,
आ स्वयं तलवार जाती हाथ में।

× ×

शान्ति खोल कर खड्ग क्रान्ति का
जब वर्जन करती है।
तभी जान लो, किसी समर का
वह सर्जन करती है।

शान्ति नहीं तब तक जब तक
सुख-भाग न नर का सम हो,

नहीं किसी को बहुत अधिक हो,
नहीं किसी को कम हो

ऐसी शान्ति राज्य करती है,
तन पर नहीं हृदय पर,
नर के ऊँचे विश्वासों पर
श्रद्धा, भक्ति, प्रणय पर।

न्याय शान्ति का प्रथम न्यास है;
जब तक न्याय न आता,
जैसा भी हो, महल शान्ति का
सुदृढ़ नहीं रह पाता।

कृत्रिम शान्ति सशंक आप
अपने से ही डरती है,
खड्ग छोड़ विश्वास किसी का
कभी नहीं करती है।

और जिन्हें इस शान्ति-व्यवस्था
में सुख-भोग सुलभ है,
उनके लिए शांति ही जीवन-
सार, सिद्धि दुर्लभ है।

पर जिनकी अस्थियाँ चबा कर,
शोणित पी कर तन का,
जीती है यह शान्ति, दाह
समझो कुछ उसके मन का।

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

## वर्षा–गीत

हरी चूनर पहन कर आ गई वर्षा सुहागिन फिर

कहीं वन बीच फूलों में पड़ी थी स्वप्न में सोई,
उलझते बादलों की लट पिया छलका गया कोई,
तिमिर ने राह कर दी-राह कच्ची धूप की धोई,
पवन की रागिनी मोतीभरे आकाश में खोई।
पहन धानी लहरिया आ रही वर्षा सुहागिन फिर

गुथी है जुगनुओं से मोरपंखी किशमिशी चोली,
दिये गुलनार माथे पर शफ़क़ की रेशमी रोली,
हिण्डोलों की लहर में गीत की कोमल कड़ी बोली,
लकीरें खींच पारे की बलाका व्योम में डोली।
लिये मन नववधू का चल पड़ी वर्षा सुहागिन फिर

हिना से लाल हाथों में लजीले चाँद की थाली,
दमकती दामिनी ज्यों माँग की हो ईंगुरी लाली।
विभा की दर्पणी में देख अपना रूप मतवाली,
फटी पौ आज यौवन की रही है गूँज हरियाली।
पहन मंजीर झरनों के चली वर्षा सुहागिन फिर

सिमटती और खिलती सद्य-स्नाता-सी चली आती,
नये सुकुमार रंगों में किरण-सा रूप छिटकाती,
अधर दाँतों तले दाबे सभी को देखती भाती,
कमर में इन्द्र-धनुषी करधनी सौ बार बल खाती।
हरी चूनर पहन कर आ रही वर्षा सुहागिन फिर

वंशीधर विद्यालंकार

## आगे आगे

तुझे पथिक बनना होगा।
आगे आगे चलना होगा॥

अपना कौन, कौन बेगाना;
कहाँ ठहरना, कहाँ ठिकाना।
परिचयहीन विश्व में तुझ को आगे आगे चलना होगा

साथी संगी इस दुनिया के,
वहीं छूटते जहाँ बनाये।
तोड़ जाल माया ममता, के आगे आगे चलना होगा॥

अपनी गठरी आप उठा कर;
होगा कहीं न ठिकाना पल भर।
राह ढूँढ़ते भूल भटक कर, आगे आगे चलना होगा॥

भय तब क्या इकला जाने में;
जब न किया इकला आने में।
अब भी इकले सदा अकेले, आगे आगे चलना होगा॥

---

## हँसी की पंखड़ियाँ

अभी अभी, बस—इतने में ही,
नन्ही नन्ही इस गुलाब की—
मृदुतम पंखड़ियों ने अपना,
मुँह खोला सुन्दर सपने-सा।
जिन पर पड़ती हैं सूरज की—,
किरणें भी मृदु नव कुसुमों-सी।
शान्त पवन! तू छूना इनको,
धीमे से—, कुछ सोता-सा हो।
कहीं न ऐसा हो कोमलता—,
तेरी बन जाये कठोरता।
बिखर पड़ें धरती पर जिससे,
मृदुल हँसी का पंखड़ियाँ वे।
हँसी सिखाने आई हैं जो,
इस दुखिया, रोती वसुधा को॥

——::——

## रक्षा बन्धन

मेरी माँ के हृदय लाडले
ओ मेरे प्यारे भाई।
देखो आज तुम्हारे हित मैं
रक्षा बन्धन ले आई

स्वागत मेरी जीवन-प्रतिमा
स्वागत प्राणों की आधार,
स्वागत मेरी बहन लाडली,
दूँ स्वर्स्व तुझी पर वार।

लाई है तो सहर्ष दे दे,
देखूँ तेरा धन कैसा?
मैं तेरा उन्मुक्त वीर हूँ
पगली? यह बन्धन कैसा?

यह बन्धन है स्नेह शांति–
शुचि सद्भावना जगाने को।
शीघ्र बाँध दूँ कर कमलों में,
विजयी वीर बनाने को।

जितनी शुभ कामना तुम्हारी
विश्व प्रेम के छोरों में,
वह सब आज निहित होती है,
जीत अरुण इन डोरों में।

---

रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही !

साँसों से पहले ही जो पन्थी पथ पर रुक जाता,
जग की नज़रों में कायर वह जी कर भी मर जाता,
चलते-चलते ही जो मिट जाता है किन्तु डगर पर,
उसके पथ की ख़ाक विश्व मस्तक पर सदा चढ़ाता,
'पथ पर साँसों की गति से है मूल्य अधिक पग-गति का,
पग के छालों से पथ पर यह लिखना थके बटोही।
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही॥

अगणित कठिन पहाड़ नदी की राह रोकने आते,
पर उसकी गति के सम्मुख सब चूर चूर हो जाते,
चलना ही, बढ़ना ही जिसके जीवन का व्रत-प्रण है,
युग के भी तूफ़ान प्रलय-घन उसको रोक न पाते,
साँसों की गति से, पग-गति से अधिक प्रबल गति मन की,
पग-गति में मन की गति भर कर चलना थके बटोही !
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही !

जीवन क्या-मृत्तिका-पिण्ड में केवल गति भर देना,
और मृत्यु क्या-उस गति को ही केवल यति कर देना,
गति-यति के जो बीच किन्तु है एक वस्तु अनजानी,
वही मनुज की हार-जीत के क्रम की अमिट निशानी
यही निशानी पथ पर जिससे जीत बनी मुस्काये,
मुस्का कर स्वागत शूलों का करना थके बटोही।
रुके न जब तक साँस, न पथ पर रुकना थके बटोही।

---

रामनिवास शर्मा

# वरंगल दुर्ग

रे जीर्ण शीर्ण विध्वस्त दुर्ग—री * ओरगल्लु की महाशिला
कितनी सदियाँ और तख्त हिले—पर तेरा क्या आधार हिला ?

तेरे प्रांगन में अभिमानी—कितने नरमुण्ड हुए लुण्ठित ?
वर्षों मानव का रक्त बहा—कितने ही खड्ग हुए कुण्ठित।

कितने आघातों को रोका—तेरी लम्बी दीवारों ने ?
कितने जन भू-शायी देखे—तेरी ऊँची मीनारों ने ?

टकरा प्राचीरों से कितनी वृद्धों की लाठी टूट गई ?
जल भरे सजीले नयनों से—कितनी आशाएँ रूठ गईं ?

हैं मौन तेरे ध्वंसावशेष—किस किस की क्रूर कहानी पर ?
झुक रहा देख तेरा गौरव—मानव की मूक निशानी पर।

---

* वरंगल का पुराना नाम।

## होली की बहार

जब फागुन रंग झमकते हों तब देख बहारें होली की
और डफ़ के शोर खड़कते हों तब देख बहारें होली की
परियों के रंग दमकते हों तब देख बहारें होली की
खुम शीशे जाम झलकते हों तब देख बहारें होली की

गुलज़ार खिले हों परियों के औ' मजलिस की तैयारी हो
कपड़ों पर रंग के छींटे हों, खुश रँग अजब गुलकारी हो
मुँह लाल, गुलाबी आँखें हों, और हाथों में पिचकारी हो
सीनों से रंग झलकते हों तब देख बहारें होली की

——::——

## आदमी

दुनिया में बादशाह क़ौन है सो वह भी आदमी
और मुफलिसो गदा है सो है वह भी आदमी
ज़रदार बेनवा है सो है वह भी आदमी
टुकड़े जो माँगता है, सो है वह भी आदमी

अशराफ़ और कमीने से ले शाह ता वज़ीर
हैं आदमी ही साहबे इज्ज़त भी और हक़ीर
याँ आदमी मुरीद है, औ आदमी ही पीर
अच्छा भी आदमी ही है 'नज़ीर'
और सब से जो बुरा है सो है वह भी आदमी

× ×

# रोटी

जब आदमी के पेट में आती हैं रोटियाँ
फूली नहीं बदन में समाती हैं रोटियाँ
आँखें परी रुखों से लड़ाती हैं रोटियाँ
जितने मज़े हैं सब ये दिखाती हैं रोटियाँ

रोटी न पेट में हो तो फिर जतन न हो
मेले की सैर ख्वाहिशे बाग़ो चमन न हो
भूखे ग़रीब दिल की ख़ुदा से लगन न हो
सच है कहा किसी ने कि भूखे भजन न हो

# शेर

लिखा हुआ है जो रोना मेरे मुकद्दर में।
ख़याल तक नहीं जाता कभी हँसी की तरफ़॥
ज़रा-सी देर ही हो जायगी तो क्या होगा?
घड़ी घड़ी न उठाओ नज़र घड़ी की तरफ़॥

जो मिल गया सो खाना दाता का नाम जपना।
इसके सिवा बताऊँ क्या तुम से काम अपना॥
अजल से वह डरें जीने को जो अच्छा समझते हैं।
यहाँ हम चार दिन की ज़िन्दगी को क्या समझते हैं॥

दाँत का दर्द बदस्तूर चला जाता है।
वही माजू, वही काफ़ूर चला जाता है॥
डारविन के उसी लेक्चर का सबक़ है अब तक
वही बन्दर वही लंगूर चला जाता है॥

बक़ के लम्प से आँखों को बचाये अल्लाह।
रोशनी आती है और नूर चला जाता है॥
गिर जाते हैं हम ख़ुद अपनी नज़रों से सितम यह है।
बदल जाते तो कुछ रहते, मिटे जाते हैं ग़म यह है॥

मज़हब छोड़ो, मिल्लत छोड़ो, सूरत बदलो, उम्र गँवाओ
सिर्फ़ किलर्की की उम्मीद और इतनी मुसीबत तोबा तोबा!
जिस रोशनी में लूट ही की आपको सूझे
तहज़ीब की तो मैं उस को तज़ल्ली न कहूँगा॥

लाखों को मिटा कर जो हज़ारों को उबारे
इसको तो मैं दुनिया की तरक्की न कहूँगा ॥
क़ौम के ग़म में डिनर खाइये हुक्काम के साथ
रञ्ज लीडर को बहुत है मगर आराम के साथ ॥
रिज़ोल्यूशन की शोरिश है मगर उसका असर ग़ायब
पलेटों की सदा सुनता हूँ और खाना नहीं आता ॥

खेतों को दे लो पानी अब बह रही है गंगा
कुछ कर लो नौजवानो उठती जवानियाँ हैं
फ़ज़लो हुनर बड़ों के गर तुम में हों तो जानें
गर यह नहीं तो बाबा वह सब कहानियाँ हैं

× ×

## विधवा-विलाप

गर कुछ आता बाँट में मेरे
सब कुछ था सरकार में तेरे
थी न कमी कुछ तेरे घर में,
नौन को तरसी मैं सागर में।
राजा के घर पली हूँ भूखी,
सदावरत से चली हूँ भूखी।
पहरों सोचती हूँ यह जी में,
आई थी क्यों इस नगरी में।
होने से मेरे फ़ायदा क्या था?
किस लिए पैदा मुझ को किया था?
आन के आख़िर मैंने लिया क्या?
मुझको मेरी किस्मत ने दिया क्या?
नैन दिये और कुछ न दिखाया
दाँत दिये और कुछ न चखाया।

रही अकेली भरी सभा में,
प्यासी रही भरी गंगा में।

खाया तो कुछ मज़ा न आया
सोई तो कुछ चैन न पाया।

फूल हमेशा आँख में खटके
और फल सदा गले में अटके।

घर है एक हैरत का नमूना
सौ घरवाले और घर सूना।

दुख में नहीं याँ कोई किसी का
बाप न माँ भाई न भतीजा।

सच यह किसी साँई की सदा थी
सुख-सम्पत का सब कोई साथी।

——::——

# कवि और शब्दार्थ

## कबीर

जन्म ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा चन्द्रवार सं१४५६ विक्रमी, मृत्यु सं १५७५ वि. । सन्त, ज्ञानी और दार्शनिक तथा कवि । व्यवसाय, कपड़े बुनना, स्वतंत्र विचारों के कारण बहुत कष्ट सहने पड़े । श्री रामानन्द से दीक्षा । आडम्बर के घोर विरोधी ।

विशेष अध्ययन के लिए—कबीर ग्रन्थावली (नागरी प्रचारिणी सभा), कबीर वचनावली (ना. प्र. स. काशी), कबीर संग्रह (वेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद)।

साखी—ज्ञान सम्बन्धी दोहे ।
स्वांग—नकल, बनावटी रूप ।
पासा—चौपड़ या जुआ खेलने की कौड़ी ।
सारी—चौपड़ खेलनेवाला ।
आहि—है ।
निरभै—निर्भय ।
दीवै—दीपक ।
अंक—गोद ।
खाला—मौसी ।
पैसे—प्रवेश करे ।
मोद—आनन्द ।
खलक—संसार ।
साँई—स्वामी ।
आन—दूसरा ।
परहरै—दूर करे ।
तातैं—इसलिए ।
रैणि—रात ।

## रहीम

पूरा नाम खानखाना अब्दुर्रह रहमान 'रहीम' । अकबर के नवरत्नों में से एक; वीर, राजनीतिज्ञ और उदार व्यक्ति, ब्रज भाषा के मर्मज्ञ ।

दोहा—हिन्दी का एक छन्द

पर–दूसरे के ।
मनसा–इच्छा ।
काया–शरीर ।
छवि–शोभा ।
अगुनी–दुष्ट ।
पय–दूध ।
गाढ़े–मुश्किल ।
है–होकर ।
नीके–अच्छे ।

सून–बेकार ।
मानुस–मनुष्य ।
कलारिन–कलाल की स्त्री ।
भुजंग–सांप ।
गोत–गोत्र ।
बड़री–बड़ी ।
सर–तालाब ।
पच्छ–पंख ।
संवहि–जमा करना

विशेष अध्ययन के लिए—रहीम रत्नावली, दम्पति-विलास ।

## अयोध्यासिंह उपाध्याय

जन्म वैशाख कृष्ण ३ सं. १९२२ वि. । कुछ समय पहले देहान्त हुआ है। निवास स्थान आज़मगढ़ (उ. प्र.) काशी विश्व विद्यालय में हिन्दी के अध्यापक हिन्दी की संस्कृत मिश्रित, अरबी-फ़ारसी मिश्रित और शुद्ध शैलियों पर समान अधिकार, अतुकान्त कविता में सफलता, उच्चकोटि के कवि, उपन्यास भी लिखे हैं, 'प्रिय प्रवास' पर मंगलाप्रसाद पारितोषिक । प्रस्तुत संकलन में 'वैदेही वनवास' से अंश लिया गया है, वैदेही को भगवान् राम विदा कर रहे हैं। अयोध्या की शोभा दर्शनीय है—

### मंगलयात्रा

सज्जिता–सजी हुई ।
अटा–ऊपर की मंजिल ।
छटा–शोभा ।
चारु–सुन्दर ।

भूरि–बहुत ।
दिवा–दिन
विभा–प्रकाश ।
यान–सवारी ।
प्रयाण–यात्रा का आरम्भ ।

विदेहजा-सीता ।
परसता-छूता

सौमित्र-लक्ष्मण

## मनोभाव

अनूठा-अनुपम, बेमिसाल।
बजरा-हार
ऊसर-जिस ज़मीन में कुछ उग नहीं सकता।

बजरा-एक तरह की नाव।

विशेष अध्ययन के लिए— प्रिय प्रवास, वैदेही वनवास, चुभते चौपदे, ठेठ हिन्दी का ठाठ, अधखिला फूल।

## गोपालशरण सिंह

द्विवेदी-कालीन कवियों में प्रमुख स्थान। जन्म पौष शुक्ल प्रतिपदा, सं. १९४८ वि. रीवां राज्य के नई गढ़ी के निवासी, बचपन से ही कविता करते हैं, अनेक संकलन।

अतीत-बहुत।
दृष्टिगोचर-दिखाई देना।
मतिमान-विद्वान्।
निपात-गिरना।
साह्लाद-आनन्द के साथ।

विषाद-दुःख।
गुणवाद-गुणों की प्रशंसा करना।
सदैव-हमेशा।
संस्थान-रहने की जगह।

विशेष अध्ययन के लिए—मानवी, माधवी।

## मैथिली शरण गुप्त

जन्म १९४३ विक्रमी, निवास स्थान चिरगाँव जिला झाँसी (उ. प्र.) हिन्दी के उच्च कोटि के कवि, पच्चीस से अधिक पुस्तकें, बंगाली से अनुवाद भी। राष्ट्रीयता के अग्रदूत और प्राचीन संस्कृति के पुजारी।

प्रस्तुत अंश आपकी पुस्तक 'साकेत' से लिया गया है। सीताजी वन में भी राजसुख भोगतीं हैं—

प्राणेश–पति ।
किसलय–ताजी कोंपल ।
आकर–खान ।
कर–हाथ ।
शुक्ति–सीप
मुक्ता–मोती ।
सचिव–मन्त्री ।
जाया–पुत्रवती स्त्री ।
श्रमवारि–पसीने की बूँद ।
तटिनी–नदी ।
व्यजन–पंखा ।
क्रीड़ा–खेल ।

विशेष अध्ययन के लिए --साकेत, यशोधरा, भारत–भारती, द्वापर, अर्जुन और विसर्जन, कुणाल गीत, मेघनाद वध, विरहिणी व्रजांगना ।

## रामनरेश त्रिपाठी

जन्म सं. १९४६ वि.। साहित्य के विभिन्न अंगो के संवारने में प्रयत्न-शील, बाल-साहित्य तथा ग्राम–गीतों के प्रकाशन में विशेष सफलता, नाटक तथा कहानियाँ भी लिखी हैं। कवि की कविता में राष्ट्रीय विचार, आलोचक ।

प्रस्तुत अंश आपकी 'पथिक' नामक पुस्तक से लिया गया है। 'पथिक' नामक व्यक्ति को एक साधु उपदेश देता है कि वह पूरे देश को एक बार देख ले और फिर देश–सेवा में लगे ।

पुलकित–रोमांचित ।
कन्दुक–गेंद
अविराम–लगातार ।
मकरन्द–फूल का रस ।
गिरि–पहाड़
खोह–गुफा ।
अघाती–तृप्त होती ।
बीहड़–भयानक ।

विशेष अध्ययन के लिए स्वप्न, पथिक, मिलन, तुलसीदास और उनकी कविता ।

## सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

जन्म-माघ शुक्ल ११, सं. १९५५ वि. जन्म स्थान महिषाद (बंगाल) वर्तमान निवास-प्रयाग।

वर्तमान हिन्दी कवियों में विशेष स्थान, छायावादी कवि, दर्शन से रुचि, भाषा पर अधिकार, हिन्दी को मधुर तथा कोमल बनाने में योग। बंगाली उपन्यासों का अनुवाद भी।

सहज-सरलता से। गात-शरीर।
हिली-मेल कर लेना, परिचित होना। दिगन्त-आकाश का छोर, क्षितिज।
मृदुल-कोमल।

विशेष अध्ययन के लिए, तुलसीदास, अपराजिता, बिल्लेसुर बकरिहा, परिमल, गीतिका, अनामिका, लिली, सखी, अलका, अप्सरा, निरुपमा।

## सुभद्राकुमारी चौहान

जन्म श्रावण शुक्ल ५, सं. १९६१, कम आयु में देहान्त। स्वदेशी आन्दोलन में सहयोग, राष्ट्रीयता की उपासना, ओज-पूर्ण रचना, कविता में वात्सल्य तथा वीर वृत्ति की अधिकता।

अतुलित-अनुपम। कौतूहल-आश्चर्य।
द्रुत-जल्दी। काओ-खाओ।
प्राकृत-स्वभाविक। प्रफुल्लित-प्रसन्न।

विशेष अध्ययन के लिए मुकुल, त्रिधारा, बिखरे मोती।

## सियाराम शरण गुप्त

जन्म भाद्रपद १५, सं. १९५२ वि.। निवास स्थान चिरगाँव, झाँसी (उ. प्र.)।

कवि, कहानी लेखक और उपन्यासकार, रचनाओं में गरीबी तथा करुणा के सच्चे चित्र।

ढूही–ढेर, मिट्टी का टीला।
वक्र–टेढ़ा।
पारस–ऐसा पत्थर जो लोहे को सोना बना दे।
नादिना–शोर करने वाली।
भुजंगिनी–सर्पिणी।
छिन्न–कटा हुआ।
रत्नाकर–रत्न का खजाना, समुद्र।
तड़ाग–तालाब।
सुश्री–अच्छी शोभा।
प्रतीर–किनारा, तट।
गेह–घर।
अतुल–अनुपम।
पंक्ति–कतार।
अपात्र–अयोग्य।

विशेष अध्ययन के लिए–आर्द्रा, दूर्वादल, आत्मोत्सर्ग।

## माखनलाल चतुर्वेदी

जन्म-चैत्र शुक्ल ११ सं. १८४५ वि. निवास स्थान खँडवा, 'कर्मवीर' साप्ताहिक के सम्पादक, गद्य–काव्य भी लिखा है, कवि, कविता में सुकुमार तथा ओजपूर्ण भावों की अभिव्यक्ति। अच्छे वक्ता। 'एक भारतीय आत्मा' के नाम से लिखते हैं। अच्छे गद्य–लेखक।

उपवन–बगीचा।
वनचर–वन के पशु।

विशेष अध्ययन के लिए—हिम किरीटिनी, कृष्णार्जुन युद्ध, साहित्य-देवता।

## महादेवी वर्मा

जन्म संवत् १९६४ वि.। जन्म स्थान फर्रुखाबाद, निवास स्थान प्रयाग। महिला विद्यापीठ की आचार्या, गीतिकाव्य को नई शक्ति दी, भाषा को

कोमल तथा भावपूर्ण बनाने में योग; तृष्णा, टीस और वेदना को मूर्तिमान किया है आपने अपनी रचनाओं में, हिन्दी के वर्त्तमान गीतों पर आपका विशेष प्रभाव।

दृग–आँख। स्मित–मुस्कान।
मिश्रण–मिलावट।

विशेष अध्ययन के लिए–यामा, नीरजा, दीपशिखा, टूटती शृंखलाएँ, अतीत के चलचित्र।

## गुरुभक्तसिंह 'भक्त'

जन्म स्थान जमनिया, जिला गाजीपुर। जन्म तिथि भाद्रपद कृष्ण २ सं. १९५०। सहृदय कवि, भाषा सरल, प्रकृति के सुन्दर दृश्यों का चित्रण।

सप्तऋषि–सप्तर्षि, आकाश में चमकने वाले सात तारे जो रात भर में आकाश का चक्कर लगा लेते हैं।
बथुआ–पालक से मिलता जुलता साग, गेहूँ के खेत में बहुतायत।
रमणी–स्त्री।
प्रतिकूल–उल्टा।
धवल–सफेद।
वीरगति–मृत्यु।

विशेष अध्ययन के लिए—नूरजहाँ, वन-श्री।

## सुमित्रानन्दन पन्त

जन्म सं॰ १९५६, जन्म स्थान-कौसानी (अलमोड़ा) निवास स्थान प्रयाग। भावुक और सहृदय कवि, कोमल भाव और सूक्ष्म-अनुभूति, भाषा के निर्माण में विशेष योग, छायावाद, पिछले दिनों प्रगतिवाद की ओर रुझान, प्रकृति के चितेरे।

कलरव–चिड़ियों की ध्वनि। जर्जर–पुरानी

विधुर–पत्नी रहित, दुःखी ।
वाल्मिकि–दीमक का बिल ।
शिल्पी–कारीगर ।
सौध–महल ।
श्रमजीवी–मजदूर ।
खग–पक्षी ।
सुभग–सुन्दर ।
औ'–और ।
विश्री–कुरूपता ।
पिपीलिका–चींटी ।
संतत–हमेशा ।
डिम्भ–अंडे, छोटा बच्चा ।
सद्म–घर ।
स्थाणु–जड़ ।
प्रवर–श्रेष्ठ ।
आत्मोत्कर्ष–आत्मा की उन्नति ।
वाहक–ले चलने वाला ।
विधायक–बनाने वाला ।

विशेष अध्ययन के लिए—पल्लव, वीणा, ग्रन्थि, गुञ्जन, ज्योत्स्ना, युगान्तर, युगवाणी, ग्राम्या ।

## बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

जन्म सं. १९५४ वि. निवास स्थान कानपुर । पत्रकार और कवि तथा जन-नेता । श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के सहयोगी । भाषा में ओज और तेज, वीरता के गायक ।

रव-शब्द ।
भूधर–पर्वत ।
गतानुगति–अन्ध अनुसरण, भेड़ की चाल ।
अन्तरिक्ष-आकाश ।
मिजराब-जिस तार से वीणा बजाते हैं ।
युगल-दो ।
फणि–साँप ।

## भगवतीचरण वर्मा

जन्म स. १९६० वि. । आजकल लखनऊ में रहते हैं । कवि, पत्रकार, उपन्यास लेखक । कविता में जीवन और मस्ती, दार्शनिक भाव ।

हस्ती–शक्ति, व्यक्तित्व ।
आलम–दुनिया ।

विशेष अध्ययन के लिए—चित्रलेखा, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, तीन वर्ष, मधुकण प्रेम संगीत।

## उदयशंकर भट्ट

आजकल दिल्ली में रहते हैं। नाटककार और कवि, कविताओं में आजकल की समस्याओं का मिश्रण। विशेष अध्ययन के लिए सागर विजय, मत्स्यगंधा, अम्बा, विषपान, कुणाल, मानसी।

## हरिवंशराय बच्चन

जन्म मार्गशीर्ष कृ. ७ सं. १९६४। निवासस्थान प्रयाग। मादकता और यौवन के कवि।

अम्बर–आकाश।
अनिल-वायु।
ऋतुपति-वसंत।
मनुहार–मनाना।

विशेष अध्ययन के लिए—आकुल अन्तर, निशा निमन्त्रण, मिलन-यामिनी, मधुशाला।

## रामधारीसिंह 'दिनकर'

बिहार प्रान्त के निवासी। विचारों में ओज और भाषा में प्रभाव, राष्ट्रीयतावादी, कविता के क्षेत्र में नई क्रांति।

प्रस्तुत अंश आपकी 'कुरुक्षेत्र' नामक पुस्तक से लिया गया है।

संक्रमशील–फैलानेवाला।
पवन उनंचास–पुराणों में वायु के उनञ्चास भेद माने गये हैं।
प्रतिशोध-बदला।
वर्जन-रोकना।
शोणित-खून।

शार्दूल–सिंह

विशेष अध्ययन के लिए-- कुरुक्षेत्र, रेणुका, द्वन्द्व गीत ।

## रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

भाषा में वेग, कहने की अपनी शैली, लालित्य, जबलपुर निवासी ।

दर्पण–आइना ।

विशेष अध्ययन के लिए—मधूलिका, अपराजिता, किरणबेला, करील ।

## वंशीधर विद्यालंकार

कवि, विचारक और आलोचक, उस्मानिया विश्व विद्यालय में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष, कविता की नई शैली, ऊँचे विचार, सरल भाषा, हैदराबाद में हिन्दी के कार्य को बढ़ानेवालों में से एक, 'अजन्ता' मासिक के सम्पादक ।

## तोरणदेवी शुक्ल 'लली'

नारी जीवन की पारखी, नारी–जीवन की उच्चता को अपनी कविता में आपने चित्रित किया है ।

प्रतिमा–मूर्ति ।

## नीरज

निवासस्थान कानपुर । अच्छे गायक, जीवन को निकट से देख कर उसे चित्रित करते हैं ।

डगर–रास्ता ।
मृत्तिका–मिट्टी ।
यति–रुकावट ।

## रामनिवास शर्मा

हैदराबाद रेडियो के कलाकार, रूपक-लेखक, उदयोन्मुख कवि ।

ओरुगल्लु–एक शिला पर बसा हुआ नगर, वरंगल का किला एक ही शिला पर है।
प्रांगन–आंगन ।
खड्ग–तलवार ।
ध्वंसावशेष–फूटने से बचे हुए ।
मूक–गूँगा ।

## नज़ीर

लोक कवि, उत्तर प्रदेश के रहने वाले थे, अक्खड़, उर्दू कविता में एक नई शैली के निर्माता, कुछ अरबी-फ़ारसी के शब्दों के साथ आपकी भाषा हिन्दी ही है । भाषा में प्रवाह है ।

डफ़–एक बाजा ।
गुलज़ार–बाग ।
जाम–प्याला ।
सीना–छाती ।
मुफलिस–गरीब ।
ग़दा–फ़कीर ।
हक़ीर–गया गुज़रा ।
जरदार–धनी ।
बेनवा–ग़रीब ।
अशराफ–सभ्य ।
कमीना–नीच ।
मुरीद–भक्त ।
पीर–पूज्य ।

## अकबर इलाहाबादी

प्रयाग निवासी थे, वकालत की, सब जज बने, खान बहादुर की पदवी

मिली। भाषा सरल, व्यंग कसने में अनुपम।

मुकद्दर–भाग्य।
अजल–मौत।
बदस्तूर-नियमानुसार, पहले की तरह
बर्क़–बिजली।
नूर–चमक।

सितम–अत्याचार।
ग़म–दुःख।
मिल्लत–जाति।
तजल्ली–प्रकाश।

## हाली

'मुसद्दस' नामक काव्य लिख कर आप बहुत प्रसिद्ध हुए। भाषा सरल, हृदय के भावों को सीधे ढंग से व्यक्त करने में सफलता।

फ़ज़ल–कृपा।

सदाबरत–जहाँ गरीबों को अन्न-दान दिया जाता है।